सात घाटियाँ

बहाउल्लाह की कृति

‘द सेवेन वैलिज़’

का हिन्दी अनुवाद

प्रस्तावना

बहाउल्लाह की कृति 'सात घाटियाँ'

बहाउल्लाह की "सात घाटियाँ" सूफी अथवा भक्ति साहित्य के संसार में एक महत्वपूर्ण कृति है। बहाई धर्म के संरक्षक शोग़ी एफेन्दी ने इसे "एक ऐसी कृति की संज्ञा दी है जिसे बहाउल्लाह की सबसे बड़ी रहस्यवादी रचना कहा जा सकता है...जिसमें बहाउल्लाह उन सात अवस्थाओं की चर्चा करते हैं जिनसे होकर एक अन्वेषी आत्मा गुजरती है और तब वह वह अपने अस्तित्व के सार को समझ पाती है।" बहाउल्लाह के सुलेमानिया पर्वत से लौटने के तुरन्त बाद इसे लिखा गया था।

भक्तियोग अथवा सूफ़ी रहस्यवाद के भारतीय आध्यात्मिक आचारशास्त्र की कड़ी में "सात घाटियाँ" नामक यह कृति परम प्रिय, सर्वोच्च ब्रह्म की खोज की राह में प्रेम और त्याग का पाठ पढ़ाती है। भक्ति का अर्थ है समर्पण। इसीलिये बहाउल्लाह सभी भौतिक आसक्तियों से अपने हृदय को निर्मल कर लेने की बात लिखते हैं। भक्तियोग समर्पण की एक पद्धति है, जिसके द्वारा सर्वोच्च परमेश्वर की उपस्थिति में होने की भक्त की इच्छा पूरी होती है।

गहन चिन्तन से परिपूर्ण यह आलेख जीवन के प्रति एक नई दृष्टि देता है और सत्य की खोज की राह पर बढ़ने वालों के दिलों को उल्लास से भर देता है। कथा एक प्रेमी की है, जो अनेक यातनाओं और उत्पीड़न को सहने के बावजूद रहस्यमय घाटियों की कठिन यात्रा करता है और बड़ी उत्सुकता के साथ उसकी तलाश करता है। जिसे पाना उसका लक्ष्य है। इस लेख में जिन घाटियों की चर्चा की गई है, वे हैं: अन्वेषण, प्रेम, ज्ञान, एकता, संतृप्ति, विस्मय, वास्तविक निर्धनता और पूर्ण शून्यता की घाटियाँ। इनमें से प्रत्येक का वर्णन इस रचना में किया गया है।

प्रेम एक रचनात्मक शक्ति है और संरचना के माध्यम से व्यक्ति आनन्द और अमरत्व प्राप्त करता है। प्रेमी सौन्दर्य (ब्रह्म) से आन्नद को प्राप्त करता है और कुरूपता से दूर रहता हैं बौद्धिक आकर्षण पर आधारित प्रेम निर्वेयक्तिक होता है और कम समय तक ठहरता है। कोई व्यक्ति जब तक सभी सांसारिक मोह से ऊपर नहीं उठ जाता तब तक ईश्वर के प्रेम का पूरा आस्वादन नहीं कर पाता। आध्यात्मिक प्रेम अथवा भक्ति केवल ईश्वर के प्रति हो सकती है। जब कोई व्यक्ति ईश्वर का प्रेम पा लेता है तब वह समष्टि से प्रेम करने लगता है, किसी से घृणा नहीं करता और सदा-सदा के लिए संतोष धारण कर लेता है। भक्ति का अनुशासन अन्य अनुशासनों की तुलना में सहज और स्वाभाविक है। भारत की आध्यात्मिक परम्परा भक्ति के विविध रूपों में चित्रित की गई है - कुसेला और कृष्ण के मित्र के रूप में चित्रित किये गये हैं। इनसे अधिक गहन और उत्कृष्ट प्रेम का उदाहरण हमें संतान के लिए माता-पिता के प्रेम में मिलता है।

यशोदा और कृष्ण के प्रेम में आध्यात्मिक पुट मिलते हैं, जिसे हम वात्सल्य भाव कहते हैं, जबकि शांत-भाव वात्सल्य का ही परिचय कराता है। यह एक शिशु की भावना अपने माता-पिता के प्रति है - ध्रुव और प्रह्लाद इसके अद्वितीय उदाहरण है। कांत भाव पत्नी का अपने पति के प्रति प्रेम है। सीता और राम अथवा रुक्मिणी और कृष्ण के सम्बन्ध को हम इस श्रेणी में पाते हैं।

अगर हम भक्तियोग का अनुपालन किसी भिन्न प्रकार से करते हैं तो हम पाते हैं कि यह दो स्तर का होता है। पहले को गौणी अथवा प्रारम्भिक कह सकते हैं, जो सभी प्रकार के प्रारम्भिक आचारण से सम्बन्धित है, दूसरा है 'परा' अर्थात ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति। यह परमोच्च प्रेम त्याग पर आधारित होता है। बिना त्याग के एकाकार होना, योग की स्थिति को प्राप्त करना सम्भव नहीं है। "सात घाटियाँ" में भी हम इसी प्रकार के प्रेम की बात पाते हैं। प्रत्यक चरण अथवा घाटी अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति की एक तैयारी है। "अहंकार के प्रति मर जाने और परमात्मा में जीवित रहने का, स्व में निर्धन होना और उस अभिलषित में सम्पन्नता का बोध कराना।"

स्वामी विवेकानन्द ईश्वर के परमोच्च प्रेम की तुलना एक त्रिकोण से करते हैं। प्रेम का पहला कोण वह है जो किसी प्रकार का मोल-भाव नहीं करता। प्रेमी बदले में कुछ नहीं चाहता, मुक्ति भी नहीं। ऐसा प्रेम केवल प्रेम के निमित्त होता है। दूसरा कोण वह है जिसमें प्रेम भयमुक्त हो जाता है भक्त ईश्वर के डर से उसे प्रेम नहीं करता। जब तक हृदय पूरी तरह भयमुक्त नहीं होता तब तक सच्चा प्रेम नहीं होता। और तीसरा कोण यह है कि प्रेम का कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं होता। इस कोण में प्रेमी उच्च विचारों का अनुसरण करता है वह अपने प्रेम (ईश्वर) में सौन्दर्य, समर्पण और शक्ति की सम्पूर्णता पाता है और इसे पाने के लिए भक्त दुःख-दर्द और यहाँ तक की मृत्यु की यातना का भी स्वागत करता है।

बहाई धर्म की स्थापना सन् 1844 में बाब के नाम से प्रसिद्ध हुए अली मुहम्मद द्वारा की गई परम महान घोषणा के साथ हुई। एक नये युग के अवतारद्वय में बाब पहले थे। छः साल की छोटी अवधि में ही बाब और उनके अनुयायियों ने फारस और आस-पास के देश के लोगों को बहाउल्लाह का शुभ संदेश पाने के लिए आतुर बना दिया था। बहाउल्लाह ने यह संदेश दिया कि अब वह समय आ गया है जब समस्त धरा एकता के सूत्र में पिरो दी जायेगी और पूरी वसुंधरा एक समाज के रूप में देखी जायेगी। कोई चार दशक की कैद और देश निकाले के कठिन सालों के दौरान बहाउल्लाह ने अपना प्रकटीकरण लिपिबद्ध किया और तत्कालीन शासकों, नेताओं तथा सामान्य लोगों को बतलाया कि प्राचीन धर्मग्रंथों में जिस "वसुधैव कुटुम्बकम्" या सम्पूर्ण मानवजाति को एक परिवार के सदस्य के रूप में देखने की जो भविष्यवाणी की गई थीं, वे अब, अन्ततः पूरी होगी। अपनी परम पावन पुस्तक "किताब-ए-अकदस" में उन्होंने इस नई विश्व-व्यवस्था का एक शब्दचित्र प्रस्तुत किया। "सात घाटियाँ" उनके अवतारकाल के प्रारम्भिक वर्षों में लिखी गई थी। जो व्यक्ति इस युग में ईश्वरीय अवतार जैसे परम महान सत्य के अनुसंधान के मार्ग पर बढ़ना चाहते हैं उनके लिए यह कृति एक निशानिर्देश है।

उस सौम्य, दयालु प्रभु के नाम पर

जय हो परमेश्वर की जिसने शून्य से अस्तित्व को रचा है, मानव की पाती पर पूर्व-अस्तित्व के रहस्य उत्कीर्ण किए हैं, दिव्य वाणी के रहस्यों के माध्यम से उसे ऐसी शिक्षा दी है जो उसके लिए अज्ञात थी, उसे उनके लिए एक 'देदीप्यमान पुस्तक' बनाई है जिन्होंने आस्था रखी है और स्वयं को समर्पित किया है इस अन्धकार ग्रसित विनाशकारी युग में समस्त वस्तुओं के सृजन (कुलू शे) से उसका साक्षात्कार कराया है, तथा अनन्तता के शिखर से 'उत्कृष्ट देवालय'[1] में अद्‍भुत स्वरोच्चार कराया है: ताकि हर मनुष्य स्वयं अपने भीतर, स्वयं अपनी प्रेरणा से, अपने प्रभु के प्रकटीकरण की उच्चता में यह साक्षी दे सके कि 'उसके' सिवा अन्य कोई ईश्वर नहीं है, ताकि हर मनुष्य यथार्थ के उत्तुंग शिखरों तक चढ़ सके-तब तक जब तक कि कोई भी इसके सिवा अन्य कुछ भी विचार नहीं करेगा क्योंकि वह देख लेगा परमेश्वर को उस उत्तुंगता में।

और मैं स्तुति और महिमागान करता हूँ उस प्रथम सागर का जो 'दिव्य सुरभि' के महासागर से प्रस्फुटित हुआ है और उस प्रथम प्रभात का जो एकत्व के क्षितिज से दीप्तिमान हुआ है, तथा उस प्रथम सूर्य का जो अनन्तता के स्वर्ग में उदित हुआ है, तथा उस प्रथम अग्नि का जो एकमेता के प्रकाशस्रोत में पूर्व-अस्तित्व के दीप में प्रज्वलित किया गया था: वह जो उदात्त जनों के साम्राज्य में अहमद के निकट जनों के समूह में मुहम्मद तथा सच्चे जनों के साम्राज्य में महमूद[2] था, ...चाहे जिस (नाम) के द्‍वारा तुम उसकी स्तुति करो: उसका सर्वोदात्त नाम[3] उन सबके हृदयों में है जो उससे अवगत हैं और उसके कुटुम्ब तथा सहचरों को प्रभूत, स्थायी तथा शाश्वत शांति लाभ हो!

पुनश्च, ज्ञान की बुलबुल ने तेरे अस्तित्व के वृक्ष की टहनियों पर जो गान किया है हमने उसे सुना है और तेरे हृदय कुंज की शाखाओं पर निश्चय के कपोत ने जो घोषणा की है उसे हमने समझा है। मैं समझता हूँ कि मैंने, सत्य ही, तेरे प्रेम के परिधान की विशुद्‍ध सुगन्ध का आस्वादन किया है और तेरे पत्र के अध्ययन से तेरे मिलन को उपलब्ध हुआ हूँ।

और चूंकि मैंने तेरे इस उल्लेख पर गौर किया है कि तू परमात्मा में मृत और उसके ही माध्यम से जीवित है, कि तू प्रेमी है, परमेश्वर और उसके "नामालंकरणों के प्रकटीकरणो" का और उसकी "विभूतियो के उदय-बिन्दुओ" के प्रियतम का - अतः मैं गरिमा के धरा-धाम से तेरे निमित्त उन पावन, ज्योतिर्मय चिन्हों को प्रकट करता हूँ जो तुझे पावनता, प्रभु-सत्संग और सौन्दर्य के दरबार की ओर आकर्षित करेंगे और ले जाएंगे तुझे उस परम पद की ओर जहाँ से तू, अपने परम प्रतिष्ठित "प्रियतम के मुखड़े" के सिवा सृष्टि में अन्य कुछ भी नहीं देखेगा और सभी रचित वस्तुओं को उस दिवस में निहारेगा जिसमें (उस 'प्रियतम' के सिवा) अन्य किसी का उल्लेख भी नहीं है।

इसके सम्बन्ध में एकत्व के बुलबुल ने गावदीया[4] के उद्यान में गायन किया है। वह कहता है - ”और तेरे हृदय की पाती पर ‘परमात्मा से डरो और परमात्मा तुम्हें ज्ञान देगा,’[5] के उज्ज्वल रहस्यों का एक लेख प्रकट होगा। और तेरी आत्मा का पक्षी पूर्व अस्तित्व के पावन अभयारण्यों का स्मरण करायेगा और उत्कट अभिलाषा के पंखों पर ‘अपने प्रभु के प्राचीन मार्गों पर चलो’[6] के स्वर्ग में उड़ान भरेगा और तक ‘हर पल का आस्वादन कर’[6] उपवनों में महामिलन के फलों का संग्रह करेगा।“

मेरे जीवन की सौगंध, ओ मित्र, यदि तुम नामों और गुणों के दर्पण में प्रतिबिम्बित परम ज्योति के निकट की ज्ञान-भूमि में उत्पन्न इन बहारों के हरे-भरे उपवन के फलो का आस्वादन कर पाते तो तेरी तीव्र उत्कठा तेरे हाथों से धैर्य और नियंत्रण की लगाम छीन लेती है और उस कौंधने वाले तीव्र प्रकाश से तेरी आत्मा को प्रकम्पित कर देती और तुझे इस धरती से ‘यर्थाथ के केन्द्र’ में स्थित उस प्रथम स्वर्गिक निवास की ओर ले चलती और तुझे उठाकर ऐसे धरातल पर ले जाती है जहाँ तू वायु में वैसे ही उड़ता जैसे पृथ्वी पर विचरण करता है और पानी पर वैसे ही चलता जैसे तू जमीन पर दौड़ता है। इसलिए, यह मुझे आनन्दमग्न करे और तुझे भी और उसे जो ज्ञान के स्वर्ग में आरोहरण करता है और उसे जिसका हृदय इससे स्फूर्तिवान हुआ है, कि निश्चय का पवन, उस ‘सर्वदयामय की शबा’ से तेरे अस्तित्व के उपवन पर प्रवाहित हो चुका है।

शांतिलाभ हो उसे जो ”उचित मार्ग“ का अनुसरण करता है।

और अब सुनो: इस धूल के निवास-स्थल से अपने स्वर्गिक आवास की यात्रा पर निकले पथिक को सात पड़ावों से गुजरना पड़ता है। कुछ लोगों ने इनको सात उपत्यकायें, सात घाटियाँ कहा है और दूसरों ने सात नगर। और वे कहते हैं कि जब तक पथिक अहं से मुक्त नहीं हो जाता, और इन सभी पड़ावों को पार नहीं कर लेता, तब तक वह कभी सामीप्य और मिलन के महासागर तक नहीं पहुँचेगा और न ही अनुपम मदिरा का पान कर सकेगा। **पहली घाटी है:**

अन्वेषण की घाटी

इस घाटी का अश्व है धैर्य। धैर्य के बिना पथिक इस यात्रा में कहीं नहीं पहुँचेगा और कोई लक्ष्य प्राप्त नहीं करेगा। और इस घाटी के पथिक को कभी हतोत्साहित भी नहीं होना चाहिए। यदि लाख वर्ष तक भी साधना करने के बावजूद वह अपने ‘मौत’ का सौन्दर्य न देख पाए तो भी उसे विचलित नहीं होना चाहिए। क्योंकि जो ”हमारे लिए“ काबा[7] की तलाश करते हैं वे इस समाचार से आनन्दविभोर होते हैं: ”हम अपने पथ पर उनका मार्गदर्शन करेंगे।“[8] अपने अन्वेषण में, वे पूरी दृढ़ता से तत्पर हैं और प्रति पल वे अचेतना के धरातल से अस्तित्व के साम्राज्य की यात्रा की कामना करते हैं। कोई बंधन उन्हें पकड़ कर नहीं रख सकता और किसी के कहने से वे रुक नहीं सकते।

इन सेवकों के लिये अनिवार्य है कि वे हृदय को-जो दिव्य कोष का उद्गम है - हर एक दाग से निर्मल कर ले और अपने पूर्वजों के पदचिन्हों का अनुकरण न करे और लोगों के प्रति मित्रता तथा शत्रुता दोनों का द्वारा बंद कर दे।

इस यात्रा में साधक उस अवस्था में पहुँचता है जिसमें वह सभी सृष्ट वस्तुओं को उस 'मीत' की खोज में व्याकुल भटकता पाता है। कितने ही जैकब वह देखेगा जो अपने जोसेफ की तलाश में भटक रहे हैं, वह अनेक प्रेमियों को देखेगा जो 'प्रिय' की खोज में तत्पर हैं, वह अभिलाषियों के एक जगत का दर्शन करेगा जो उस एक अभिलषित को ढूंढ़ रहे हैं। प्रतिपल वह एक गहन विषय पाता है, हर घड़ी वह एक रहस्य से अवगत होता है, क्योंकि उसने अपना हृदय दोनों लोकों से हटा लिया है और वह उस प्रिय के काबा[7] के लिए चल पड़ा है। प्रत्येक पग पर उस 'अदृश्य साम्राज्य' से सहायता प्राप्त होगी और उसकी साधना की तपिश बढ़ती जायेगी।

इस साधना को प्रेमरूपी मजनू[9] की कसौटी पर कसा जाना चाहिए। कहा जाता है कि एक दिन मजनू के पास कुछ लोग आये। वह चलनी के धूल छान रहा था और उसके आँसू बहते जा रहे थे। उन्होंने कहा, "तू क्या कर रहा है?" उसने कहा, "मैं लैला को ढूंढ रहा हूँ।" वे चीख कर बोले, "हाय रे तू! लैला तो विशुद्ध चेतन पदार्थ की है, और तू उसे धूल में खोज रहा है।" उसने कहा, "मैं हर जगह उसे ढूंढ़ता हूँ, शायद किसी जगह वह मुझे मिल जाए।"

हाँ, बुद्धिमान जनों के लिए "स्वामियों के स्वामी" को यद्यपि धूल में खोजना लज्जाजनक है, फिर भी यह खोज की तीव्र लालसा को इंगित करता है। "जो उत्साह के साथ किसी वस्तु को खोजेगा वह उसे पाएगा।"[10]

सच्चा साधक अपनी साधना के लक्ष्य के अतिरिक्ति अन्य कुछ भी पाने की चेष्टा नहीं करता और प्रेमी अपने प्रिय से सम्मिलन के सिवा कुछ नहीं चाहता। साधक जब तक सारी वस्तुओं का त्याग नहीं करेगा तब तक वह अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँचेगा। अर्थात, जो कुछ उसने देखा है और सुना है और समझा है, सबको शून्य मानकर ही वह चेतना के साम्राज्य में प्रवेश कर सकेगा, जो "परमात्मा की नगरी" है। यदि हम उसे खोजना चाहते हैं तो परिश्रम आवश्यक है, यदि हम उसके साथ पुनर्मिलन के मधु का पान करना चाहते हैं तो उत्कट अभिलाषा आवश्यक है और यदि हम इस प्याली को चख लें तो हम संसार का परित्याग कर देंगे।

इस यात्रा में यात्री हर जगह रहता है, हर क्षेत्र में निवास करता है। हर चेहरे में वह उसी 'मीत' का सौंदर्य तलाशता है, प्रत्येक देश में वह उस 'प्रियतम' को ही तलाशता फिरता हैं वह प्रत्येक संगति में सम्मिलित होता और प्रत्येक आत्मा का साहचर्य चाहता है, जिससे सम्भवतः किसी के मन में वह उस 'मीत' का रहस्य अनावृत्त कर ले, अथवा किसी चेहरे में उस प्रेमपात्र का सौंदर्य निहार ले।

और यदि,परमात्मा की सहायता से, वह इस यात्रा में उस अज्ञात मित्र का अता-पता पा जाता है और यदि उसे चिरकाल से बिछुड़े जोसेफ की सुरभि ईश्वरीय संदेशवाहक[11] में प्राप्त हो जाती है तो वह सीधा चलकर **प्रेम की घाटी** में पग रखता है और प्रेम की अग्नि में ही गल जाता है। इसी नगरी में परमानन्द का स्वर्ग बसा है, उत्कट इच्छा का विश्व-प्रकाशक सूर्य चमकता है, और प्रेम की अग्नि प्रज्वलित है। और जब प्रेमाग्नि प्रज्वलित होती है तो वह विचारशक्ति की फसल को जला कर राख कर देती है।

इस चरण में यात्री स्वयं को, और हर वस्तु को भुला देता है। न तो अज्ञान को देखता है और न ज्ञान को, न तो संशय को और न निश्चय को। भटकाव भरी रातों और दिक्षा-बोध के प्रभात के बीच का फर्क वह जानता ही नहीं। वह अविश्वास तथा विश्वास दोनों से भागता है और प्राणघातक विष भी उसके लिए मलहम बन जाता है।

इसलिए ‘अत्तार’[12] कहता है -

निष्ठाहीनों का छल, जैसे आस्थावानों को विश्वास,

वैसे ही ‘अत्तार’ के दिल को तेरे दर्द की प्यास।

इस घाटी का अश्व है पीड़ा और यदि कोई पीड़ा न हो तो यह यात्रा कभी समाप्त नहीं होगी । इस चरण में प्रेमी उस प्रिय के अतिरिक्त और किसी का विचार नहीं रखता है और उस ‘मीत’ के सिवा अन्य किसी की शरण नहीं चाहता है। पल-पल उस प्रिय पात्र के पथ पर वह शत-शत प्राण न्योछावर करता है, पग-पग पर वह उस प्रिय के चरणों पर हजारों शीश अर्पित कर देता है।

ओ मेरे भ्राता! जब तक तू प्रेम के मिस्र देश में प्रवेश नहीं करेगा, तब तक तू उस मित्र के सौंदर्य रूपी जोसेफ को कदापि नहीं पा सकेगा। और जब तक, जैकब की भाँति, तू अपने बाहरी नेत्रों का त्याग नहीं करेगा, तब तक तू अपने आन्तरिक अस्तित्व के नेत्र को कदापि नहीं खोल सकेगा। और जब तक तू प्रेम की अग्नि में नहीं जलेगा, तक तक तू ‘लालसा के प्रेमी’ से कदापि सम्भाषण नहीं कर सकेगा।

प्रेमी को कोई भय नहीं होता और कोई हानि उसके समीप नहीं जा सकती। तू उसे आग में शीतल और समुद्र में शुष्क देखता है।

प्रेमी है वह जो नरकाग्नि में शीतल है,

ज्ञाता है वह जो शुष्क है सागर में।[13]

प्रेम अस्तित्व को नहीं स्वीकारता और जीवन की कामना नहीं करता। वह मृत्यु में जीवन देखता है और लज्जा में गरिमा निखारता हैं प्रेम की उन्मत्तता के योग्य होने के लिए स्थिर बुद्धि की प्रचुरता आवश्यक है, उस ‘मीत’ के बंधनों के योग्य होने के लिए चेतना से परिपूर्ण होना जरूरी है। धन्य है वह

गर्दन जो उसके फन्दे में फंसी है, धन्य है वह शीश जो उसके प्रेम की पगडंडी की धूल में लोटता है। इसलिए, ओ मित्र, तू अपना अहंकार त्याग दे ताकि तू उस अद्‌वितीय को पा सके, इस नश्वर पृथ्वी के पार चला जा ताकि तू स्वर्ग के नीड़ में घर तलाश सके। शून्य जैसा बन, यदि तू अस्तित्व की अग्नि प्रज्वलित कर प्रेम की पगडंडी के योग्य होना चाहे।

प्रेम अधिकार नहीं करता है जीवित आत्मा पर,

बाज आखेट नहीं करता है मुर्दा चूहे का।

प्रेम हर मोड़ पर एक दुनिया में आग लगाता चलता है और वह जिस भूमि पर अपनी ध्वजा ले जाता है उसी को नष्ट कर देता है। उसके राज्य में जो है उसका अस्तित्व नहीं है और उसके साम्राज्य में बुद्‌धिमानों का शासन नहीं चलता। प्रेम का दैत्य विचारशक्ति के स्वामी को निगल जाता है और ज्ञान के अधिपति का विनाश कर देता है। वह सात समुद्रों को पी जाता है, फिर भी उसके हृदय की प्यास नहीं बुझती और वह कहता है, ”क्या अभी कुछ और है?“[14] प्रेमी स्वयं का परित्याग कर देता है और पृथ्वी पर जो कुछ है उससे मुँह मोड़ लेता है।

प्रेम है अनजाना इस धरा को उस स्वर्ग को,

बावरेपन हैं उसमें सत्तर-और-दो।[15]

उसने अपने बन्धनों में हजारों शिकार जकड़ रखे हैं, हजारों विवेकीजनों को अपने बाणों से घायल कर दिया है। जान लो कि संसार की हर लालिमा उसके क्रोध से है और मनुष्यों के कपोल उसी के हलाहल से पीले पड़ गये हैं, मृत्यु ही उसकी दवा है, वह छाया की घाटी के अतिरिक्त कहीं विचरण नहीं करता। फिर भी, प्रेम के होठों पर उसका विष मधु से अधिक मधुर है और साधक की नजरों में उसका विनाश लाख जीवन से अधिक उत्तम है।

अतः जरूरी है कि शैतानी ‘अहं’ के परदे प्रेम की आग में भस्म कर दिय जायें ताकि आत्मा विशुद्‌ध और निर्मल हो सके और इस प्रकार लोकों के उस स्वामी के पद की महानता को जान सके।

जला प्रेम की अग्नि भस्म कर दे तू सारा,

तभी प्रेमियों की नगरी में कदम बढ़ाना।[16]

और यदि सृष्टा की सम्पुष्टि से, प्रेमी प्रेम रूपी बाज के पंजों से बच निकला तो वह **ज्ञान की घाटी** में प्रवेश करेगा और संशय से निकलकर निश्चय में प्रवेश करेगा और विभ्रम के अंधकार से ईश-भय के मार्गदर्शक प्रकाश की ओर प्रवृत्त होगा। उसके आंतरिक नेत्र खुल जायेंगे और वह अपने ‘प्रिय’ से गुप्त सम्भाषण करेगा। वह सत्य और पवित्रता का द्‌वार पूरी तरह खोल देगा और व्यर्थ कल्पनाओं के कपाट बन्द कर देगा। वह इस चरण में परमात्मा के निर्णय से सन्तुष्ट होता है, युद्‌ध को शांति के रूप में देखता

है और मृत्यु में शाश्वत जीवन के रहस्य प्राप्त करता है अन्तर्बाह्य नेत्रों से वह सृष्टि के साम्राज्यों में तथा मनुष्यों की आत्माओं में पुनरूज्जीवन के रहस्यों का साक्षात्कार करता है और विशुद्ध हृदय से परमात्मा के अनन्त अवतारों के दिव्य विवेक को जाना जाता है। महासागर में वह देखता है बस एक बूंद, एक बूंद में वह सागर का रहस्य समझ लेता है।

कण कण का दिल चीर के देखो

पाएगा तू एक सूर्य उसके भीतर।

इस घाटी में यात्री 'एकमेव सत्य' ईश्वर की रचना शैली में स्पष्ट मंगल-भावना के अतिरिक्त कुछ नहीं देखता है और प्रतिक्षण कहता है - "दयालु प्रभु की सृष्टि में तू कोई दोष नहीं देख सकता: एक बार फिर देख: क्या एक भी दोष तू देख रहा है?"[17] वह अन्याय में न्याय को देखता है और न्याय में कृपा को। अज्ञान में वह अनेक ज्ञान छिपा जाता है और ज्ञान में सहस्रों विवेक प्रत्यक्ष होते देखता हैं वह शरीर के पिंजड़े को और वासनाओं को तोड़ फेंकता है और अनश्वर साम्राज्य के लोगों के साथ लयबद्ध हो जाता है। वह आन्तरिक सत्य की सीढ़ियों पर आरोहण करता है और आन्तरिक महत्व के स्वर्ग की ओर द्रुतगति से बढ़ता है। वह "हम उनको उन क्षेत्रों में और स्वयं में अपने चिन्ह दिखाएंगे" की नौका में बैठता है और "जब तक उन्हें यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि (यह पुस्तक) सत्य है"[18] के सागर पर यात्रा करता है। और यदि उसके साथ अन्याय होता है तो वह धैर्य रखता है और यदि वह कोप का भाजन बनता है तो भी वह प्रेम प्रदर्शित करता है।

एक बार एक प्रेमी अपनी प्रियतमा से वियोग के फलस्वरूप वर्षों आहें भरता हुआ एकाकीपन की आग में जल रहा था। जैसा कि प्रेम का नियम है, उसका हृदय अधीर था और उसका शरीर मानों चेतना से शून्य हो गया था। उसके बिना जीवन उसे, दुःसह व्यंग्य प्रतीत होता था। काल प्रवाह ने उसे क्षीण कर डाला। प्रियतमा की तीव्र कामना में कितने ही दिन उसने बेचैनी में बिताए, उसी की वेदना में वह कितनी ही रातें सो नहीं सका। उसका शरीर आह से विदीर्ण हो गया, उसके हृदय के घाव उसे दुःख भरी साँसे भरने को बाध्य करते थे। अपनी प्रियतमा की एक झलक पाने के लिए उसने एक सहस्र जीवन अर्पित कर दिये थे किन्तु वह उसे उपलब्ध नहीं हुई। चिकित्सकों की समझ में नहीं आया कि उसे स्वस्थ कैसे किया जाये, उसके सहचरों ने भी उसका संग छोड़ दिया। सही है कि चिकित्सकों के पास प्रेम के रोगी की कोई औषधि नहीं है, एक प्रेमपात्र की कृपाकोर ही उसका अवलम्ब है।

अन्ततः, उसकी लालसा के वृक्ष में हताशा ही फलीभूत हुई और उसकी आशा की चिनगारी बुझकर राख हो गई। फिर एक रात वह और नहीं रह सका, घर के बारह आया और हाट की ओर चल दिया। अकस्मात एक पहरेदार ने उसका पीछा किया। वह भाग खड़ा हुआ, पहरेदार उसके पीछे था। फिर तो दूसरे पहरेदार भी उसके साथ आते गए और उन्होंने उस परेशान हाल प्राणी का रास्ता हर ओर से रोक लिया। तब उस तुच्छ व्यक्ति के हृदय से एक चित्कार फूटी, इधर-उधर दौड़ता दुःखित हो वह मन ही मन

विलाप करने लगा: अवश्य ही यह पहरेदार इजराइल है, मेरी मौत का देवता, इतने वेग से मेरा पीछा करता हुआ, अथवा यह कोई अत्याचारी मनुष्य है जो मुझे हानि पहुँचाना चाहता है। उसके पैर आगे बढ़ते रहे, प्रेम के बाण से घायल उसके एक पैर से रक्तस्राव हो रहा था और उसका हृदय क्रंदन कर रहा था। तभी वह एक उपवन की चहारदीवारी के पास पहुँच गया, अत्यंत पीड़ा के साथ वह उस पर चढ़ सका, क्योंकि वह बहुत ऊँची थी और फिर जीवन की चिन्ता न कर उसने बगीचे में छलांग लगा दी।

और यह लो! वहाँ उसने अपनी प्रियतमा को देखा, हाथ में दीपक लिए वह खोई हुई एक अंगूठी खोज रही थी। जब समर्पित-हृदय उस प्रेमी ने अपहरित अपनी प्रेमिका को देखा तो उसने चैन की सांस ली और हाथ उठाकर प्रार्थना की मुद्रा में चित्कार उठा: ”हे परमात्मन! तू उस पहरेदार को यश दे, सम्पत्ति दे, दीर्घायु दे। क्योंकि वह और कोई नहीं ग्रैबिएल था जो इस दीन का मार्गदर्शन कर रहा था, अथवा वह ईस्राफली था, इस तुच्छ को जीवन-दान देने वाला देवता।“

वस्तुतः उसके शब्द सत्य थे, क्योंकि बाहरी तौर पर जो पहरेदार का अत्याचार लग रहा था उसमें उसने अनेक रहस्यमय न्याय पा लिए थे और देख लिया था कि परदे के पीछे कितनी सारी दयालुताएँ छिपी थीं। क्रोधावेश में, उस रक्षक ने उसका मार्गदर्शन ही किया था जो प्रेम की मरुभूमि में अपनी प्रेमिका के सागर का प्यासा था। और उसने वियोग की काली रात को पुनर्मिलन के प्रकाश से ज्योतित कर दिया था। उसने उसे सामीप्य के उपवन में पहुँचा दिया था जो उससे बहुत दूर था और एक पीड़ित आत्मा को उसने हृदय के वैद्य के द्वार दिखला दिये थे।

यदि उस प्रेमी ने पहले ही इस तथ्य को समझ लिया होता, तो वह आरम्भ में ही उस पहरेदार को साधुवाद देता और उसके लिए प्रार्थना करता और वह उस अत्याचार को न्याय के रूप में पहचान लेता, किन्तु अन्त को न जानते हुए वह कराहता रहा और प्रारम्भ में अपने उपालम्भ देता रहा। किन्तु जो ज्ञान के उपवन की यात्रा करते हैं वे युद्ध में शांति और क्रोध में मैत्री का दर्शन करते हैं क्योंकि वे अन्त को आदि में ही देख लेते हैं।

ऐसी स्थिति है इस घाटी के पथिकों की, किन्तु इससे ऊपर की घाटियों के लोग आदि और अन्त को एक जैसा देखते हैं, बल्कि, वे न आदि देखते हैं और न अन्त, न ‘प्रथम’ देखते हैं, न ‘अन्तिम’[19] सच कहा जाए तो हरित उपवन में निवास करने वाले वे अमृतनगर के निवासी ”न प्रथम, न अंन्तिम“ को देखते हैं। बल्कि जो प्रथम हैं वे उससे दूर भागते हैं और जो अंतिम हैं वे उससे भी परे हो जाते हैं। क्योंकि वे नामों और उपाधियों के लोकों से परे इतनी तेजी से जा चुके हैं जैसे कौंधती हुई बिजली। इसलिए कहा जाता है: ”सम्पूर्ण एकता में अन्य कोई भी गुण-भाव विद्यमान नहीं होता।“[20] अस्तु, उन्होंने तो ‘चिरन्तनतत्व’ की छाया में ही अपना आवास बना लिया है।

इस संदर्भ में खाजेह अब्दुल्ला[21] ने, परमात्मा उनकी प्रिय चेतना को पावनता प्रदान करे - एक सूक्ष्म विचार का निरूहण किया है और ”तू सीधे मार्ग का हमें पथ प्रदर्शन कर“[22] का अर्थ बड़े ही प्रभावपूर्ण ढंग से स्पष्ट किया है: ”हमें उचित मार्ग दिखा अर्थात अपने सारतत्व के प्रेम से हमें सम्मानित कर जिससे हम न तो अपनी ओर और न ही तेरे अतिरिक्त अन्य किसी की ओर उन्मुख हों और पूर्णरूप से केवल तेरे ही बन सकें और केवल तुझे ही जाने, केवल तुझे ही देखें और तेरे सिवा कुछ न सोचें।“ अपितु, ये इस स्थान से भी बढ़कर हैं, जिसके सम्बन्ध में कहा गया है:

प्रेम है एक आवरण प्रेमी तथा प्रेमपात्र के मध्य

मुझे नहीं है अनुमति इससे ज्यादा कुछ भी कहने की।[15]

इस क्षण में आकर ज्ञान का अरुणोदय हो जाता है तथा पैदल पग बढ़ाने और दिशाभ्रम एवं भटकाव के दीपक बुझा दिये जाते हैं।[23]

आवरणयुक्त थे इससे मूसा

समस्त शक्ति तथा प्रकाश के होते हुए,

फिर, तू उड़ान का प्रयास मत कर

जिसके पास पंख ही नहीं है।[15]

तू यदि दिव्य साहचर्य तथा प्रार्थनामय भाव का व्यक्ति है तो ‘पवित्रात्माओं’ से प्राप्त सहायता के पंखों के सहारे उड़ान भर ताकि तू उस “मीत“ के रहस्यों का अवलोकन कर सके और ‘प्रियतम’ की रश्मियों को उपलब्ध हो सके। ”सत्यतः, हम परमात्मा के अंश हैं और उसी के पास लौट जाएंगे।“[24]

ज्ञान की घाटी से होकर, जो सीमाओं का अंतिम धरातल है, साधक **एकता की घाटी** में पहुँचता है। यहाँ वह ”सर्वसम्पूर्णता“ के पात्र से पान करता है और ‘एकत्व के प्राकट्यों’ पर दृष्टि डालता है। साधना के इस चरण में वह ‘अनेकता’ के आवरणों को छिन्न-भिन्न कर देता है, वासना के लोकों से कहीं ऊपर उठाकर वह एकत्व के स्वर्ग में पहुँच जाता है। दिव्य सृष्टि के रहस्यों को वह परमात्मा के कानों से सुनता है तथा परमात्मा के नेत्र से देखता हैं वह प्रवेश करता है अपने ‘मीत’ के अभ्यारण्य में और एक आत्मीय की भाँति उस प्रियतम के मण्डप में सहभागी बनता हैं ‘सर्वसम्पूर्णता’ की बाँहों से वह सत्य की भुजा फैलाता है और उद्घाटित करता है शक्ति के रहस्य। उसे न तो अपने नाम के दर्शन की लालसा होती है, न यश की और न पद की, बल्कि प्रभु-स्तुति में ही वह स्वयं अपनी संतुष्टि पाता हैं स्वयं अपने नाम में वह प्रभु के नाम के दर्शन पाता है उसके लिए ”समस्त गीत उस राजाधिराज से आगत है,“ [15] तथा प्रत्येक स्वर-लहरी उसी से प्राभूत है। वह ”कहो, सब कुछ परमात्मा से है“[25] के सिंहासन पर विराजता है और ”परमात्मा के अतिरिक्त और कहीं कोई शक्ति अथवा सामर्थ नहीं हैं“[26] के गलीचे पर विश्राम पाता हैं

समस्त वस्तुओं को वह एकत्व की दृष्टि से निहारता है, दिव्य सूर्य की कांतिमान किरणों को 'परम तत्व' के उदय-स्थल से उदित हो वह समान रूप से समस्त सृष्ट वस्तुओं पर प्रभासित होते देखता है तथा समस्त सृष्टि पर एकत्व की ज्योतियों को परावर्तित होते पाता है।

हे परम श्रेष्ठ! यह स्पष्ट है कि अस्तित्व के साम्राज्यों में पथिक अपनी यात्रा के चरणों में जो रूपान्तर देखता है वे सब उसके अपने आभास से उद्भूत होते हैं। हम एक उदाहरण देंगे ताकि इसका अर्थ पूरी तरह स्पष्ट हो जाये। सूर्य का विचार करो। वह सभी वस्तुओं पर यद्यपि एक ही कांति से चमकता है और प्राकट्य के सम्राट की आज्ञा से समस्त सृष्टि को प्रकाश प्रदान करता है, तथापि स्थान विशेष पर उस स्थान की क्षमता के अनुसार ही वह प्रकट होता है और अपनी ज्योति प्रदान करता है। उदाहरणार्थ, दर्पण में वह अपनी गोलाई तथा आकार को प्रतिबिम्बित करता है क्योंकि दर्पण में पूरी ग्राह्यता है, स्फटिक में वह अग्निरूप में प्रकट करता है और अन्य वस्तुओं में वह अपनी केवल प्रभा प्रदर्शित करता है, अपनी सम्पूर्ण गोलाई नहीं। फिर भी उस प्रभाव के जरिए सृष्टा की आज्ञा से वह प्रत्येक वस्तु को, उस वस्तु की गुणवत्ता के अनुसार प्रभावित करता है जिसका तू भी साक्षी है।

इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु में उस वस्तु की प्रकृति के अनुसार रंग दृष्टिगोचर होते हैं। उदारण के लिए, पीले ग्लोब में किरणें पीली चमकती हैं, श्वेत में किरणें श्वेत हो जाती हैं और लाल में किरणें लाल दिखाई देती है। अतः ये विभिन्नताएँ वस्तु से हैं, चमकने वाले प्रकाश से नहीं। और यदि कोई स्थान प्रकाश के लिए पूरी तरह बन्द हो जैसे, दीवारों या छत के द्वारा तो, प्रकाश के वैभव से वह पूर्णतया वंचित होगा, वहाँ सूर्य चमकता दिखाई नहीं देगा।

इसी प्रकार कुछ अयोग्य आत्माओं ने ज्ञान की भूमि को अहंकार तथा वासना की दीवार से घेरकर सीमित किया है और अज्ञान तथा दृष्टिहीनता से उन्हें ढंक दिया हैं। इस तरह वे दैवी सूर्य के प्रकाश तथा 'शाश्वत प्रियतम' के रहस्यों से दूर रह गई हैं, वे 'संदेशवाहकों के प्रभु' के स्पष्ट 'धर्म' के रत्न जटित विवेक से दूर भटक गई हैं, उस 'सर्वसौन्दर्यमय' की पावनता से वंचित रह गई हैं और आभासम्पन्न काबा से निर्वासित हो गई है। इस युग के लोगों का यही मोल है।

और यदि कोई बुलबुल[27] अहंकार की मृत्तिका से ऊपर उड़ान भरे और हृदय के गुलाबकुंज में बसेरा करे और अरब के मधुर सुरों में ईरान देश के सुमधुर गान से परमेश्वर के रहस्यों का वर्णन करने लगे जिसका एक-एक शब्द मृतकों में स्फूर्तिमय नवजीवन का संचार करेगा और इस अस्तित्व की मृत-प्रायः अस्थियों को 'पवित्र चेतना' से भर देगा तो देखना कि कैसे ईर्ष्या के हजारों चंगुल और विद्वेष के अनगिनत चोंच अपनी पूरी ताकत से उसके प्राणों के पीछे पड़ जाएंगे।

हाँ आडे-तिरछे चलने वाले को मधुर सुगन्ध दुर्गन्धयुक्त प्रतीत होती है और नासिका स्राव से पीड़ित मनुष्य के लिए खुशबुनुमा इत्र का होना न होने जैसा ही है। इसी से, अज्ञानियों के मार्गदर्शन हेतु कहा गया है:

तू अपने सिर से निकाल मैल सब साफ कर,

और परमेश्वर की श्वांस ले उसके स्थान पर।[15]

संक्षेप में, वस्तुओं का अन्तर अब स्पष्ट हो गया है। इस प्रकार जब पथिक केवल प्राकट्य के स्थान पर अपनी दृष्टि जमाता है, अर्थात जब वह केवल बहुरंगी ग्लोब देखता है - तो उसे पीला, लाल, सफेद सब दिखते हैं। इसलिए सृष्टि के प्राणियों के मध्य कलह व्याप्त है और कुछ परिसीमित आत्माओं की अन्धकार भरी धूल ने विश्व को ओझल कर दिया है और कुछ लोग ऐसे हैं जो प्रकाश के शक्तिशाली पुंज पर ही दृष्टि केन्दित करते हैं तथा कुछ ऐसे हैं जिन्होंने एकत्व की सुरा का पान किया है और वे सूर्य के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं देखते।

इस तरह से इन तीन भिन्न-भिन्न तलों पर विचरण करते हैं। इसी से पथिकों को समझ और शब्दों में भिन्नता है और पृथ्वी पर निरन्तर कलह दिखाई देती है। क्योंकि कुछ ही लोग हैं जो एकत्व के तल पर निवास करते हैं और उसी दुनिया की बात करते हैं, कुछ ऐसे हैं जो सीमाओं के साम्राज्यों में बसे हुए हैं तथा कुछ ‘अहं’ के विविध धरातलों पर, जब कि अन्य लोग पूरी तरह आवरण से ढके पड़े हैं। इसलिए तो, युग के अज्ञानी जन जिनके पास दिव्य सौंदर्य की प्रभा का अंश मात्र भी नहीं होता, अपने-अपने दावे प्रस्तुत किया करते हैं और प्रत्येक युग तथा धर्म-चक्र में एकत्व के सागर के निवासियों पर ऐसे-ऐसे जुल्म ढाते हैं जिसके पात्र वे स्वयं होते हैं। ”परमात्मा यदि मनुष्यों को उनके हठधर्मी कार्यों के लिए दण्ड दे तो वह पृथ्वी पर चलती फिरती किसी चीज को नहीं रहने दे। किन्तु एक निश्चित बिन्दु पर आकर वह उनको दण्डित करने में विलम्ब से काम लेता है.....।“[28]

हे मेरे भ्राता। विशुद्ध हृदय एक दर्पण जैसा है, प्रेम और परमात्मा के अतिरिक्त अन्य सबसे विराग का लेप लगाकर उसे स्वच्छ कर ताकि, उसके अन्दर सच्चे सूर्य का प्रकाश दीप्त हो सके और शाश्वत प्रभाव का उदय हो। और तब स्पष्ट रूप से तू ”न तो मेरी पृथ्वी और न ही मेरा स्वर्ग मुझे धारण करता है, अपितु मेरे निष्ठावान सेवक का हृदय मुझे धारण करता है“[29] का तात्पर्य समझ लेगा। और तब तेरा जीवन तेरे हाथ में होगा और असीम आनन्द के साथ तू उसे उस नये प्रियतम के सम्मुख अर्पीत कर देगा।

एकत्व के सम्राट के प्रकटीकरण का प्रकाश जब हृदय तथा आत्मा के सिंहासन पर प्रतिष्ठित होता है तब उसकी दीप्ति प्रत्येक अवयव तथा अंग-प्रत्यंग में दृश्यमान होती है। उस समय इस विख्यात परम्परागत कथन का रहस्य अंधकार में भी चमक उठता है: ”सेवक मेरी ओर प्रार्थना में तब तक बढ़ता है जब तक मैं उसे उत्तर न दूँ, और जब मैं उसे उत्तर दे देता हूँ तो मैं ही वह श्रवणेन्द्रिय बन जाता हूँ जिससे वह सुनता है.......।“ क्योंकि इस प्रकार वह ”गृहस्वामी“ अपने घर में प्रकट हुआ है और उस निवास के सभी स्तम्भ उसके प्रकाश से कान्तिमान हुए हैं। इस प्रकाश का सम्पूर्ण प्रभाव उस प्रकाशदाता से प्राप्त

होता है, इसलिए यह प्रकाश ऐसा है कि सब उसी से गति पाते हैं और उसकी इच्छा से उठ खड़े होते हैं। और यही उस निर्झरणी का उद्गम है जिससे निटस्थ लोग पान करते हैं। जैसा कि, कहा जाता है - ”एक झरना जिससे प्रभु के समीप पहुँचे हुए लोग पान करेंगे.......।“[30]

इन कथनों का कोई भी यह अर्थ न लगाये कि परमात्मा का स्वरूप मानवीय है और न ही यह समझे कि परमात्मा के लोग सामान्य सृष्टि जैसे हैं, न वे तेरी ‘श्रेष्ठता’ को ऐसी मान्यताओं की ओर ही ले जाएँ। क्योंकि परमात्मा, अपने साररूप में, आरोह-अवरोह तथा प्रवेश एवं निर्गमन से परे पवित्र हैं। वह सम्पूर्ण अनन्तकाल से मानव प्राणियों के गुण-दोषों से मुक्त रहा है और सदेव रहेगा। कोई मनुष्य उसे कभी जान नहीं पाया है, किसी आत्मा ने कभी उसके अस्तित्व को जाने वाला मार्ग नहीं पाया है। प्रत्येक रहस्यविद उसके ज्ञान की घाटी में भटका है, प्रत्येक संत उसके सार को समझने के प्रयास में अपना मार्ग भूल गया है। वह बुद्धिमानों की समझ से ऊपर है, परम पावन है, ज्ञानियों के ज्ञान से परे वह परमोच्च है। उसका मार्ग अवरूद्ध है और उसकी खोज करना अपावन कृत्य है।[4] उसका प्रमाण है उसके प्रतीक, उसका अस्तित्व की उसका साक्ष्य है।

इसी हेतु, उस प्रियतम के मुखारबिन्द के प्रेमीजनों ने कहा है - ”हे तू, जिसका ‘परम तत्व’ ही उसके परम तत्व का मार्ग दिखलाता है और जो अपने प्राणियों की किसी प्रकार की तुलना से परे परम पावन है।[29] परमशून्यता पूर्व अस्तित्व के मैदान में अपने घोड़े को कैसे दौड़ा सकती है, अथवा एक भागती छाया सदा स्थायी सूर्य तक कैसे पहुँच सकती है? उस ‘मीत’ ने कहा है, ”तेरे बिना हमने तुझे जाना नहीं“ और उस प्रियतम[31] ने कहा है, ”और न हम तेरी उपस्थिति को उपलब्ध हुए थे।“

अस्तु, ज्ञान की विभिन्न श्रेणियों के सम्बन्ध में ये जो उल्लेख किये गए हैं उनका सम्बन्ध यथार्थ के सूर्य के प्रकटीकरणों के ज्ञान से है, वह सूर्य जो ‘दर्पणों’ पर अपना प्रकाश प्रतिबिम्बित करता है।

और उस प्रकाश का वैभव हृदयों में है, तथापि वह चेतना के परदों और इस सांसारिक विषय-वस्तु के आवरण में छिपा है, उसी प्रकार जैसे लोहे की लालटेन के अन्दर दीपशिखा। लालटेन को जब हटा लिया जाता है, केवल तभी दीपशिखा का प्रकाश दमक सकता है।

उसी प्रकार, जब तू विभ्रम की लिपटी हुई पट्टियों को अपने हृदय से दूर कर देगा, तभी एकत्व की किरणें प्रत्यक्ष हो जाएंगी।

तो यह स्पष्ट है कि जब किरणों के लिए भी न कोई प्रवेश द्वार है और न निर्गमन-तो उस ‘अस्तित्व के सार’, उस मनोवांछित रहस्य के लिए यह कैसे सम्भव है? ओ मेरे भ्राता, इन धरातलों पर साधना की भावना से यात्रा करो, अंधी अनुकृति से नहीं। सच्चे साधक के शब्दों की सोंटी से पीछे नहीं रखा जा सकेगा, न संकेतों की चेतावनी से रोका जा सकेगा।

प्रेमी और प्रेमपात्र को कोई परदा कैसे अलगा देगा?

सिकन्दर की दीवार भी नहीं विलग कर सकती उनको।[32]

भेद बहुतेरे हैं और अजनबी अनेकों। ग्रंथों के खंड उस प्रिय के रहस्य को समा लेने को पर्याप्त नहीं होंगे, न उसे उन पृष्ठों में ही समेटा जा सकता है, भले ही वह एक शब्द से अधिक न हो, एक चिन्ह से अधिक न हो। "ज्ञान एक अकेला बिन्दु है, किन्तु अज्ञानियों ने उसे अनगिनत कर दिया है।"[29]

इसी आधार पर, इसी प्रकार लोकों के बीच विभेदों का विचार करो। दिव्य लोग चाहे अनन्त हों तथापि कुछ लोग उन्हें चार बताते हैं - कालजगत (जमान) जो ऐसा जगत है जिसमें आदि और अन्त दोनों हैं, अवधि-जगत (दार) जिसका आदि तो है किन्तु जिसके अन्त को प्रकट नहीं किया गया है, सातत्व-जगत (सरमद) जिसका आदि देखा नहीं जा सकता लेकिन जो अंतवाला जाना जाता है और अनन्त-जगत (अजाल) जिसका न आदि देखा जो सकता है और न अंत। इन बिन्दुओं को लेकर यद्यपि अनेक भिन्न-भिन्न मत हैं, विस्तार से जिनका वर्णन निरर्थक श्रम होगा। इस प्रकार, कुछ लोग कहते हैं कि सातत्व-जगत का न तो आदि है और न अंत और शाश्वतता-जगत को अदृश्य अजेय उच्चतम स्वर्ग का नाम देते है। दूसरे इनको 'स्वर्गिक सभा-मण्डप, (लाहुत), उच्चतम स्वर्ग (जबरुत), देवदूतों के साम्राज्य (मलकूत) तथा नश्वर संसार (नासुत) के लोक कहते हैं।[29]

प्रेम के मार्ग की यात्राएँ चार प्रकार की कहीं जाती हैं,-सृष्ट प्राणियों से उस एक सत्य तक, उस एक सत्य से प्रणियों तक, प्राणियों से प्राणियों तक और उस एक सत्य से उस एक सत्य तक।

पूर्वकालों के रहस्यवादी दृष्टाओं तथा विशिष्ट विद्वानों के अनेक कथनों का उल्लेख मैंने यहाँ नहीं किया है, क्योंकि अतीत के कथनों के विशद उद्धरणों को अंकित करने की मेरी इच्छा नहीं है। दूसरों के शब्दों को उद्धृत करना अर्जित ज्ञान को सिद्ध करता है, दिव्य अनुग्रह को नहीं। यह इतना भी जो हमने यहाँ उद्धृत किया है वह मानव स्वभाव के प्रति मेरी आदर भावना और मित्रों के प्रति मेरे सदाचरण के कारण है और फिर ये इस 'पत्र' के दायरे से बाहर के विषय हैं। उनके कथनों का विवरण देने की हमारी अनिच्छा का कारण अहंकार नहीं है, बल्कि यह विवेक का प्रकटीकरण तथा कृपा का प्रदर्शन है।

यदि खिज़ सागर पर जलयान को नष्ट कर दे,

तो भी इस दोष में हैं एक सहस्त्र अच्छाइयाँ।

अन्यथा, यह सेवक अपने को सम्पूर्ण रूप से अन्तर्हित तथ्या शून्य जैसा मानता है - परमात्मा के किसी प्रियजन के पार्श्व में भी, फिर उसकी पवित्रात्माओं की उपस्थिति में तो वह स्वयं को अत्यल्प ही देखता है। उस सर्वोच्च मेरे प्रभु की जय हो। इसके अतिरिक्त, हमारा उद्देश्य पथिक की यात्रा के चरणों का विवरण देना है, गूढ़ ज्ञानवेत्ताओं के परस्पर विरोधी कथनों का उल्लेख करना नहीं।

यद्यपि सापेक्ष जगत के आदि तथा अंत के सम्बन्ध में एक संक्षिप्त उदाहरण दिया गया है तथापि एक दूसरा उदाहरण दिया जा रहा है जिससे सम्पूर्ण अर्थ स्पष्ट हो सके। मिसाल के लिये तेरी ‘श्रेष्ठता’ अपने ही स्व का विचार करे, अपने पुत्र से तू पहले है और अपने पिता के बाद। अपनी बाह्य आकृति में तू दैवीय सृष्टि के साम्राज्यों की शक्ति के उन्मेष की बात करता है, अपने आन्तरिक अस्तित्व में तू उन निगूढ़ रहस्यों को प्रकट करता है जो तुझमें सन्निहित दैवीय धरोहर है। और इस प्रकार प्रथमपन और अंतिमपन, बाह्यता और आन्तरिकता, संदर्भित अर्थ में, तेरे स्वयं का सत्य हैं, कि तुझे प्रदत्त इन चारों दशाओं में तू उन चार दैवीय अवस्थाओं को समझे, कि अस्तित्व के गुलाब-वृक्ष की समस्त शाखाओं पर तेरे हृदय की बुलबुल, दृश्य या अदृश्य यह स्वरोच्चार कर सके - ”वह प्रथम है और अंतिम है, दृश्यमान और निगूढ़ है।“[33]

ये कथन मनुष्यों की सीमाओं से सापेक्ष परिधि है। अन्यथा, उन श्रेष्ठ पुरुषों ने, जो मात्र एक पग में ही सापेक्ष और सीमित जगत के उस पर चले गये हैं और उस पूर्ण के उत्तम तल पर निवास पा लिए हैं और जिन्होंने प्राधिकारिता तथा दिव्याज्ञा के लोकों में अपने शिविर तान लिए हैं उन्होंने इन सापेक्षताओं को मात्र एक चिन्गारी से जला डाला है और इन शब्दों को एक ओस बिन्दु से मिटा डाला है। और वे चेतना के सागर में तैरते तथा प्रकाश की पवित्र वायु में उड़ते हैं। फिर ऐसे तल पर शब्दों की प्राणवत्ता ही क्या है, कि “प्रथम“ या ”अंतिम“ या इनके अतिरिक्ति अन्य देखे अथवा उल्लेख किए जायें। इस साम्राज्य में, प्रथम स्वयं में अंतिम ही हैं और अंतिम प्रथम हैं।

प्रेम की अपनी आत्मा में

तू निर्मित कर एक ज्वाला,

और करदे भस्म सारे विचार

तथा सम्रग शब्द-माला।[15]

हे मेरे मित्र, अपने को देख: तू यदि पिता न बना होता और तुझे पुत्र की प्राप्ति न हुई होती तो तूने इन कथनों को न सुना होता। अब तू उन सबों भूल जा, ताकि तू एकत्व के विद्यालय में प्रेम के स्वामी से दीक्षा पा सके और परमात्मा के समीप लौट सके और वास्तविकता के आन्तरिक देश का[34] अपने सच्चे स्थान के लिए परित्याग कर सके और ज्ञान के वृक्ष के साये में निवास कर सके।

हे प्रिय! अपने को निर्धन बना ताकि तू वैभव के उच्च सभामण्डप में प्रवेश पा सके और विनम्र बन ताकि तू महिमा की सरिता से पान कर सके और उस काव्य के सम्पूर्ण अर्थ को उपलब्ध हो सके जिनके बारे में तूने पूछा था।

इस प्रकार यह स्पष्ट किया गया कि ये चरण पथिक की संकल्पना पर निर्भर हैं। प्रत्येक नगर में वह एक लोक के दर्शन करेगा, प्रत्येक घाटी में वह एक निर्झर के निकट पहुँचेगा, प्रत्येक तृणभूमि में वह

गीत सुनेगा। किन्तु उस गूढ़ स्वर्ग के गरुड़ पक्षी के मानस में चेतना के अनगिनत विलक्षण गायन भरे हैं और फारसी पक्षी की आत्मा में अनेक अरबी स्वर-लहरियाँ हैं, किन्तु ये निगूढ़ हैं और निगूढ़ ही रहेंगी।

यदि मैं बोलूं तो बहुतेरे चित्त हो जाएंगे शीर्ण,

और जो मैं लिखूँ[15] तो तमाम

लेखनियाँ कहो जाएँगी विदीर्ण।[35]

शांति लाभ हो उसे जो इस महान यात्रा का समापन करता है और मार्गदर्शन की प्रकाशवलियों से उस 'एकमेव सत्य' ईश्वर का अनुसरण करता है।

और पथिक, इस स्वर्गिक यात्रा के उच्च धरातलों को पार करता हुआ, संतृप्ति की घाटी में प्रवेश करता है।

इस ”घाटी“ में वह चेतना के धरातल में प्रवाहमान दिव्य संतृप्ति के झोकों का अनुभव करता है। अभाव के आवरणों को भस्मसात कर वह, अन्ततः तथा बाह्य दृष्टि से सभी वस्तुओं के अन्दर तथा बाहर ”परमात्मा अपनी प्रचुरता से प्रत्येक की क्षतिपूर्ति करेगा“[36] के दिवस का बोध करता है। वह शोक से परमानन्द की ओर, संताप से मोद की ओर उन्मुख होता है। उसकी व्यथा और विलाप हर्ष तथा आनन्द प्रदाता बन जाते हैं।

बाह्य दृष्टि से यद्यपि, इस घाटी के पथिक धूल में निवास कर सकते हैं किन्तु आन्तरिक रूप से वे गूढार्थ की ऊँचाइयों में सिंहासनासीन होते हैं, वे आन्तरिक महत्वों वाली अनन्त कृपाओं का सेवन करते हैं और चेतना की सुस्वादु सुराओं का पान करते हैं।

इन तीन घाटियों का वर्णन करते हुए वाणी असमर्थता का अनुभव करती है और वर्णन अधूरा रह जाता है। लेखनी अपने क्षेत्र में पग नहीं बढ़ाती, मसि एक बिन्दु भर अंकित कर पाती हैं इन तलों पर हृदय की बुलबुल के पास कुछ अन्य ही गीत तथा रहस्य हैं जो हृदय को मथ डालते हैं और आत्मा में कोलाहल मचा देते हैं, किन्तु अंतरंग रहस्य हृदय से हृदय को ही चुपके से कहा जाता है और यह राज सिर्फ एक अन्तर्रात्मा से दूसरी अन्तर्रात्मा तक रहता है।

गूढ़ रहस्यों के ज्ञाताओं का मुखरित होता आनन्द,

एक हृदय से दूसरे हृदय में स्वयं पहुँचता है स्वच्छन्द।

ऐसा एक नहीं संवाहक, वहन करे जो यह सन्देश,[32]

मैं तो चुप हूँ, अनगिन विषयों पर दुर्बलता से सविशेष।

मेरे शब्द नहीं संकेतित कर सकते से सर्वरहस्य,

मेरी वाणी रुक जाएगी इस वर्णन से परे अवश्य।[37]

हे मित्र, तू जब तक ऐसे रहस्यों के उपवन में प्रवेश नहीं करेगा तब तक तू इस घाटी की अमृत सुरा को होठों से कभी नहीं लगा सकेगा। और तू यदि इसे एक बार चख ले तो तू अन्य सभी वस्तुओं से अपने नेत्रों को बचायेगा और संतोष की सुरा का पान करेगा और तू अन्य सभी वस्तुओं से स्वयं को बन्धनमुक्त कर लेगा और अपने को 'उससे' आबद्ध कर लेगा और उसके मार्ग में अपना जीवन न्योछावर कर देगा और अपनी आत्मा का भार उतार फेंकेगा। तथापि, इस क्षेत्र में अन्य कोई नहीं है जिसे भूलने की आवश्यकता तुझे हो - "वहाँ परमात्मा था और उसके समीप शून्य था" क्योंकि इस तल पर यात्री प्रत्येक वस्तु में उस मीत' के सौंदर्य का साक्षात्कार करता है। यहाँ तक कि अग्नि में भी, उस 'प्रिय' का मुखड़ा देखता है। विभ्रम में वह यथार्थ का रहस्य निहारता है और गुणों में वह उस 'सारतत्व' की पहेली पढ़ता है। क्योंकि अपने निःश्वास से उसने आवरण जला दिये हैं और अपने एक ही क्षणिक दृष्टिपात से उसने पंखों को विच्छिन्न कर दिया हैं बेधक दृष्टि से वह नई सृष्टि पर नेत्र केन्द्रित करता है, स्वच्छ हृदय से वह सूक्ष्म सत्यों को अंगीकार करता है। "और इस दिवस में हमने तेरी दृष्टि को तीव्र बना दिया है"[38] के द्वारा यह पर्याप्त रूप से प्रमाणित है।

विशुद्ध संतोष के तलों से होकर यात्रा के पश्चात पथिक **विस्मय की घाटी** में आता है और महत्ता के महासागरों में उछालें मारता है और क्षण-क्षण उसका आश्चर्य बढ़ता जाता है।

अब वह सम्पदा के आकार को साक्षात निर्धनता के रूप में देखता है और स्वतंत्रता के सार को निपट नपुंसकता के रूप में। इस समय वह उस सर्वमहिमामय के सौंदर्य से अवाक् रह जाता है और तब स्वयं अपने जीवन से वह व्यथित हो उठता है। विस्मय के इस चक्रवात ने कितने ही रहस्यमय वृक्षों का मूलोच्छेदन कर दिया है, कितनी ही आत्माओं को श्रान्त-क्लान्त कर डाला है। क्योंकि इस घाटी में यात्री उलझन में डाल दिया जाता है, तथापि जिसने उसे उपलब्ध किया है उसकी दृष्टि में ऐसे कौतुक श्रद्धेय और अत्यन्त प्रिय होते हैं। प्रत्येक क्षण वह एक आश्चर्यमय जगत का, एक नई नवेली सृष्टि का अवलोकन करता है, और विस्मय पर विस्मय करता जाता है और एकत्व के स्वामी की रचनाओं पर स्तब्धता में खो जाता है।

वस्तुतः हे भ्राता, हम यदि प्रत्येक सृष्ट वस्तु पर विचार करें तो हम अनेकों परिपूर्ण विवेक वहाँ प्रत्यक्षतः देखेंगे और विविध नए तथा अद्भुत सत्यों का पायेंगे। सृष्ट वस्तुओं में एक है स्वप्न। देखो कितने रहस्य उसमें संकलित हैं, कितना ज्ञान वहाँ संग्रहीत है, कितने जगत वहाँ सन्निहित हैं। जरा निरीक्षण कर, कैसे तू किसी मकान में सोया है और उसके दरवाजे बंद हैं। अकस्मात तू अपने को दूर किसी नगर में पाता है जहाँ तू पैरों से चलकर या शरीर को थकाए बगैर प्रवेश करता है, अपनी आँखों का उपयोग किये बिना ही तू देखता है, अपने कान लगाये बिना ही तू सुनता है, जिह्वा के बिना ही तू बोलता

है। और संयोगवश दस वर्षों के बाद देखेगा कि बाहरी दुनिया में वही चीजें हैं जो आज ही रात तेरे स्पप्न में आई हैं।

इस तरह स्वप्न में अनेक विवेक मनन करने को हैं, जिन्हें उनके सच्चे तत्वों में इस घाटी के लोगों के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं समझ सकता। पहला, कि कैसा है यह जगत जहाँ नेत्र और कान और हाथ और जिहवा बिना मनुष्य इन सबका उपयोग करता है? दूसरा, कि कैसे होता है यह कि बाह्य जगत में तू एक स्वप्न का प्रभाव आज देखता है जबकि निद्रा जगत में वह दृश्य तूने कोई दस वर्ष पहले देखा था? इन दोनों जगतों के बीच अन्तर का और उनमें छिपे रहस्यों का विचार कर, जिससे तू दैवीय सम्पुष्टियों और स्वर्गिक अनुसंधानों को उपलब्ध होकर पवित्रता के प्रदेशों में प्रवेश कर सके।

उस परमोदात्त परमात्मा ने ये चिन्ह मनुष्यों में रखे हैं, इस उद्देश्य से कि दार्शनिक जीवन से परे रहस्यों को नकार न सकें और जिसका वचन उन्हें दिया गया है उसे महत्वहीन न कर सके। क्योंकि कुछ लोग विचार शक्ति का आश्रय लेते हैं और तर्क जिसे नहीं समझ पाता उससे इन्कार करते हैं और फिर दुर्बल मस्तिष्क उन विषयों को कभी ग्रहण नहीं कर सकते जिनका हमने वर्णन किया है, बल्कि सर्वोच्च, दिव्य मेधा ही उनको समझ सकती है।

दुर्बल विचार शक्ति कैसे घेर सकती है कुरान को,

मकड़ी कैसे फंसा सकती है पक्षी को अपने जाल में?[40]

विस्मय की घाटी में इन सारी दशाओं का साक्षात्कार प्राप्त होता है और यात्री प्रतिपल और अधिक की तलाश करता है और थकान का अनुभव नहीं करता है। चिन्तन की श्रेणियाँ निर्धारित करते तथा विस्मय की अभिव्यक्ति करते हुए ‘प्रथम तथा अंतिम के स्वामी’[39] ने इस प्रकार कहा है - ”हे प्रभु! तेरे प्रति मेरे आश्चर्य की अभिवृद्धि कर!“

इसी प्रकार, मानवी सृष्टि की पूर्णताओं पर विचार कर और यह कि ये सारे धरातल तथा अवस्थाएँ मनुष्य के भीतर ढंकी-छीपी रखी गई हैं।

अपने को मानता है क्या तू महज लुघ रूप में,

जब कि तुझमें है ब्रह्माण्ड सिमटा सारा?[40]

अतः हमें पशु दशा को नष्ट करने का प्रयास अवश्य करना चाहिए, जब तक कि मानवता का तात्पर्य प्रकाश में न आ जाए।

इस प्रकार लुकमान ने भी, जिसने विवेक के निर्झर से पान किया और दिव्य दया की जलधाराओं का आस्वादन किया था, अपने पुत्र नाथन के समक्ष पुनरुज्जीवन और मृत्यु के तलों को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य तथा उदाहरण के रूप में स्वप्न को प्रस्तुत किया था। हम यहाँ उसका वर्णन करते हैं जिससे

विलुप्तधर्मा इस सेवक के माध्यम से दिव्य एकता के विद्‌यालय के उस युवक की, निर्देश कला के उस वयोवृद्‌ध की ओर उस परम की स्मृति रह सके। उसने कहा था - ”ओ वत्स, तू यदि सोने को समर्थ नहीं है, तब तू करने को समर्थ नहीं है। और यदि तू सोने के बाद जागने को समर्थ नहीं है, तब तू मृत्यु के बाद उठने को भी समर्थ नहीं होगा।“

ओ मित्र, हृदय शाश्वत रहस्यों की निवास स्थली है। उसे क्षणभंगुर मनःस्वप्नों का घर मत बनाओ। अपना बहुमूल्य जीवन-कोष इस द्रुतगामी जगत के व्यस्त होकर नष्ट मत करो। तू पावनता के जगत से आता है, अपना हृदय इस धरती से आबद्‌ध मत कर। तू सामीप्य के सभा मंडप का वासी है, धूल के गृह-देश का चयन मत कर।

संक्षेप में, इन अवस्थाओं के वर्णन का कहीं अंत नहीं है, लेकिन पृथ्वी के लोगों द्‌वारा ढाये गये अत्याचारों के कारण यह सेवक आगे और कहने की मनोदशा में नहीं है।

अभी कथा यह खत्म नहीं है पर कहने का चाव नहीं,

अतः यह विनती है मेरी मुझे क्षमा कर तुम देना।[15]

लेखनी कराहती है और मसि आँसू बहाती है और हृदय की सरिता[41] में लहू की लहरें बहती हैं। ”परमात्मा ने हमारे लिए जो कुछ नियत किया है उसके अतिरिक्त और कुछ हम पर नहीं बीत सकता।“[42] शांति लाभ हो उसे जो उचित मार्ग का अनुसरण करता है।

विस्मय की उत्तुंग शिखरों को पार करने के बाद पथिक **वास्तविक निर्धनता और पूर्ण शून्यता की घाटी** में आता है।

यह स्थान है अहंकार के प्रति मर जाने और परमात्मा में जीवित रहने का, स्व में निर्धन होना और उस अभिलषित में सम्पन्नता का बोध करना। यह निर्धनता सृष्ट जगत की वस्तुओं में निर्धन होने का और ईश्वरी जगत की वस्तुओं में धनवान होने को इंगित करती है। क्योंकि जब सच्चा प्रेमी और समर्पित मित्र उस प्रिय की उपस्थिति में पहुँचेगा तो उस प्रेमपात्र का कौंधता हुआ सौंदर्य तथा प्रेमी की हृदयाग्नि एक ज्वाला उत्पन्न करेंगी और सभी परदों तथा आवरणों को भस्मसात कर देंगी। हाँ, जो कुछ उसके पास है वह सब, हृदय से लेकर त्वचा तक, प्रज्वलित हो उठेगा, ताकि उस ‘मीत’ के अतिरिक्त कुछ भी शेष न रह जाये।

‘दिवसों के पुरातन’ के गुण जब हुए प्रकटित,

मूसा ने तब जला डाले गुण पार्थिव वस्तुओं के।[15]

जिसने इस स्थान को उपलब्ध किया है वह उस सबसे मुक्त, पावन हो जाता है जिसका सम्बन्ध संसार से है। इसी से, जो उसकी उपस्थिति के सागर तक आ गये हैं, उनको यदि इस नाशवान संसार की

सीमित वस्तुओं में से किसी का भी स्वामी न रहते पा जाये, वह चाहे बाह्य सम्पत्ति हो अथवा निजी अभिमत, तो इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। क्योंकि प्राणियों के पास जो कुछ है वह उनकी अपनी सीमाओं द्वार परिसीमित हो जाता है और जो कुछ उस एक सत्य के पास है वह उन सबसे मुक्त है। इस कथन का गहराई से अवश्य मनन किया जाये ताकि इसका अभिप्राय स्पष्ट हो सके। ”सत्यतः धर्मपरायण जन कर्पूर निर्झर से मृदुल सुरा पात्र से पान करेंगे।“[43] यदि ‘कर्पूर’ का भावार्थ विदित हो जाये तो वास्तविक अभिप्राय प्रत्यक्ष हो जायेगा। यह अवस्था उस निर्धनता की है जिसके बारे में कहा जाता है, ”निर्धनता मेरी शोभा है।“[44] और आन्तरिक तथा बाह्य निर्धनता के अनेक चरण तथा अनेक अर्थ हैं जिनका यहाँ उल्लेख करना मैंने उपयुक्त नहीं समझा है। इसलिए इनको किसी अन्य समय के लिए मैंने सुरक्षित रख छोड़ा है, बशर्ते प्रभु ऐसा चाहे तथा भाग्य को यह मंजूर हो।

यह वह धरातल है जहाँ सभी वस्तुओं के चिन्ह (कुलु शे) पथिक में मिट जाते हैं और अनन्तता के क्षितिज पर दिव्य मुखड़ा अंधकार से बाहर निकल आता है और ”पृथ्वी पर जो है सब बीत जायेगा, सिवाय तेरे स्वामी के मुखड़े के......“[45] प्रत्यक्ष हो जाता है।

ओ मेरे मित्र, पूरी एकाग्रता से चेतना के गान सुनो और उन्हें ऐसे ही संजो कर रखो जैसे अपनी आँखों को। क्योंकि स्वर्गिक विवेक, बसंत के बादलों की भाँति, मनुष्यों की हृदय-भूमि पर सर्वदा नहीं बरसेंगे। और यद्यपि उस सर्वकृपालु की कृपा कभी थमती अथवा रुकती नहीं है, फिर भी प्रत्येक काल और युग में उसका एक भाग और एक अनुग्रह एक निश्चित माप में प्रदान किया जाता है। ”और वहाँ कोई एक वस्तु नहीं बल्कि वस्तुओं के भंडार हैं किन्तु हम उसे निश्चित मात्रा में ही नीचे भेजते हैं।“[46] उस प्रेम-पात्र की दया के मेघ मात्र भावना के उपवन में बरसते हैं और मात्र बसंत के मौसम में यह अनुग्रह प्रदान करते हैं। अन्य ऋतुओं को इस महानतम कृपा का कोई अंश प्राप्त नहीं है, बंजर भूमि खण्डों को इस अनुग्रह का कोई भाग नहीं मिल पाता है।

ओ भ्राता! प्रत्येक सागर में मोती नहीं होंगे, प्रत्येक शाखा पुष्पित नहीं होगी और न बुलबुल उस पर गीत छेड़ेगी। अतः इससे पहले कि रहस्यमय बैकुण्ठ की बुलबुल परमेश्वर के उपवन की ओर लौट जाये और स्वर्गिक प्रभात की किरणें सत्य के सूर्य के पास वापस चली जायें - प्रयत्न कर ले, ताकि सम्भवतः तू इस नश्वर संसार की माटी के ढेर में सदास्थायी उपवन से आती सुरभि ग्रहण कर सके और इस नगरी के लोगों की छत्रछाया में सदासर्वदा निवास कर सके। और जब तू यह महानतम पद प्राप्त कर लेगा, इस परम सामर्थ्य के धरातल पर आ जाएगा, तब तू निहार पाएगा उस ‘प्रियतम’ को और भुला देगा अन्य सब कुछ:

हर दरो-दीवार पर जगमगाहट है उस ‘प्रियतम’ की

ओ अंतर्दृष्टि वालों! यहाँ परदा नहीं कोई।[12]

तो अब, तू जीवन-बिन्दु का त्याग कर जीवनप्रदाता के सागर तक आ पहुँचा है यह वह लक्ष्य है जिसकी तुझे चाह थी, यदि ईश्वरेच्छा हुई तो, इसे तू प्राप्त करेगा।

इस नगर में प्रकाश का आवरण भी छिन्न-भिन्न होकर ओझल हो जाते हैं। ”उसके सौन्दर्य पर प्रकाश के अतिरिक्त कोई आवरण नहीं होता, उसके मुखड़े पर प्रकटीकरण के अतिरिक्त कोई परदा नहीं होता।“[29] कैसा अद्भुत क्षण है जब वह प्रियतम सूर्य के सदृश्य दृष्टिगत होता है, तथापि असावधान जन कृत्रिम शोभा की वस्तुओं तथा अधम धातु के पीछे दौड़ लगाते हैं। सच ही, उसके प्रकटीकरण की तीव्रता ने उसको आवृत कर लिया है और उसकी परिपूर्ण कांति ने उसे छिपा लिया है।

यथा सूर्य तथा भास्वर हो वह चमका है,

किन्तु हाय! वह अंधों की नगरी में आ धमका है।“[15]

इस घाटी में, यात्री ”अस्तित्व और प्राकट्य के एकत्व“[47] के चरणों को पीछे छोड़ ऐसे एकत्व को उपलब्ध होता है जो इन दोनों अवस्थाओं से मुक्त है। केवल परमानन्द ही इस विषय को समाहित कर सकता है, न कि कथन और तर्क और जिसने यात्रा के इस चरण पर निवास किया अथवा इस उपवन भूमि से आती श्वास ग्रहण की है, वही उसे जानता है जिसके बारे में हम बोल रहे हैं।

इन सभी यात्राओं में पथिक अवश्य ही ”नियम“ से तिल भर भी न हटे, क्योंकि यह वस्तुतः उस ”पथ“ का रहस्य और ”सत्य“ के वृक्ष का फल है और इन सभी चरणों में वह अवश्य ही आज्ञाओं के पालन के परिधान से चिपटा रहे और समस्त निषिद्ध वस्तुओं के परित्याग की डोर को दृढ़ता से थामे रहे, जिससे उसे नियम के पात्र से पोषित और सत्य के रहस्यों से अवगत कराया जा सके।“[48]

यदि इस सेवक का कथन समझा न जा सके, अथवा भ्रान्ति उत्पन्न करे तो उसे अवश्य पुनः पूछा जाये, ताकि कोई संशय न रहे और अर्थ ऐसे ही स्पष्ट हो जाये जैसे उस ”सुशोभित स्थान“[49] से दमकता उस प्रियतम का मुखड़ा।

काल जगत में इन यात्राओं का कोई दृष्टिगोचर अंत नहीं है, किन्तु निसंग पथिक-यदि अदृश्य सम्पुष्टि उस पर अवतरित हो और धर्मसंरक्षक उसकी सहायता करें - इन सात अवस्थाओं को सात पगों से पार कर सकता है, नहीं बल्कि सात सांसों में, नहीं अपितु एक ही सांस में, यदि परमात्मा की ऐसी इच्छा और कामना हो। और यही ”ऐसे उसके सेवकों पर उसकी कृपा बरसती है जिनको वह चाहता है“[50] का तात्पर्य है।

जो एकाकीपन के स्वर्ग में उड़ान भरते हैं और उस परम के सागर तक पहुँच जाते हैं, वे इन नगर को-जो परमात्मा में जीवन का स्थान है - गूढ़ ज्ञानववेत्ताओं की अग्रतम स्थिति, तथा प्रेमीजनों के सुदूरतम गृहप्रदेश के रूप में गण्य करते हैं। किन्तु रहस्यमय महासागर के इस द्रुत विलुप्तधर्मा जन के

लिए, यह स्थान हृदय चार अवस्थाओं से सम्पन्न हैं, जिसका वर्णन किया जाता यदि कोई सजातीय आत्मा मिल जाती।

उद्यत हुई जब लेखनी चित्रित करने को यह स्थान,

टुकड़े-टुकड़े हो गई वह, पृष्ठ की टूटी कमान।[13]

सलाम![51] ओ मेरे मित्र! बहुतेरे शिकारी श्वान एकत्व की मरुभूमि के इस हरिण का पीछा करते हैं, बहुतेरे चंगुल शाश्वत वाटिका की इस सारिका पर नख-प्रहार करते हैं। निर्दयी काक परमात्मा के स्वर्गों के इस पक्षी की प्रतीक्षा में बैठे हैं और ईर्ष्या के शिकारी प्रेम के चारागाह के इस मृग का दबे पाँव पीछा कर रहे हैं।

ओ शेख! अपने प्रयासों में तू एक चिमनी का निर्माण कर, सम्भवतः वह विरोधी पवनों से इस ज्वाला की रक्षा कर सके, तथापि यह प्रकाश प्रभु के दीपक में प्रदीप्त तथा चेतना के भूमण्डल पर चमकते रहने की ही आकांक्षा करता है। क्योंकि प्रभु-प्रेम में उठा हुआ शीश निश्चय ही तलवार से गिरेगा और लालसा से ज्योतित जीवन अवश्यमेव बलिदान किया जायेगा, और वह हृदय जो इस प्रिय का स्मरण करता है निश्चय ही रक्तरंजित होगा। कितना उत्तम कहा गया है:

प्रेम से मुक्त जिओ, क्योंकि उसकी शांति की व्यथा है, उसका आरम्भ है दर्द, उसका अन्त है मृत्यु।[37]

शान्तिलाभ हो उसे, जो उचित मार्ग का अनुसरण करता है।

. . . .

फारसी में गुंजिश्क (गोरैया) कहे जाने वाले पक्षी की सामान्य जातियों के विश्लेषण के बारे में जो विचार तूने व्यक्त किये हैं उनके सम्बन्ध में सोचा गया।[52] गुढ़ सत्य में तू सुस्थापित प्रतीत होता है। तथापि प्रत्येक तल पर, प्रत्येक अक्षर को एक अर्थ दिया गया है जो उस तल से सम्बन्धित है। वस्तुतः पथिक प्रत्येक नाम में एक भेद तथा प्रत्येक अक्षर में एक रहस्य पाता हैं एक अर्थ में, ये वर्ण पवित्रता का संदर्भ देते हैं।

काफ़ या गाफ़ (क या ग) 'कुफी' (मुक्त) को संकेतित करते हैं, अर्थात, "तू अपने को उससे मुक्त कर जिसकी तुझे कामना है, तब अपने प्रभु की ओर आगे बढ़।"

नूह 'नाजीह' ('विशुद्ध करना') का बोधक है, अर्थात, "उसके अतिरिक्त अन्य सबसे अपने को विशुद्ध बना जिससे तू उसके प्रेम में अपना जीवन समर्पित कर सके।"

जीम 'जानिब' ("पीछे हटना") है, अर्थात "उस एक सत्य ही देहरी से पीछे हट यदि तुममें अभी भी पार्थिव प्रवृत्तियाँ हैं।"

शीन 'उश्कुर' ("धन्यवाद") है - "तू अपने प्रभु को उसकी धरती पर धन्यवाद दे ताकि वह अपने स्वर्ग में तुझे धन्य कर सके, यद्यपि एकत्व के लोक में यह स्वर्ग उसकी पृथ्वी के सदृश्य है।"

काफ़ का अर्थ है 'कुफ़ी', अर्थात "तू अपने ऊपर से सीमाओं के लिपटे आवरण उतार दे ताकि तू जान सके जो कुछ तूने 'पावनता' की दशाओं के बारे में नहीं जाना है।"[53]

तू यदि इन नश्वर पक्षी[54] के मधुमय संगीत को सुने, तो तू अमर पात्र को खोज निकालेगा और प्रत्येक नाशवान प्याली से निजात पा जाएगा।

शांति लाभ हो उन्हें जो उचित मार्ग पर चलते हैं।

संकेतार्थ

1. अवतार
2. मुहम्मद, अहमद् और महमूद "स्तुति करना" "उदात्त करना" से निकले पैगम्बर के नाम तथा उपाधियाँ हैं।
3. कुरान 17: 110
4. अली का प्रबोधन।
5. कुरान 2: 282
6. कुरान 16: 22
7. मक्का का पवित्र स्थान। यहाँ शब्दार्थ है लवश।
8. कुरान 29: 69। "और जो कोई हमारे लिए प्रयास करता है, हम उसका अपने मार्गों में मार्गदर्शन करेंगे"।
9. शाब्दिक रूप से मजनूं का अर्थ है 'उन्मादी'। प्राचीन फारसी और अरबी शिक्षा के सुप्रसिद्ध प्रेमी की उपाधि है यह। उसकी प्रेयसी थी एक अरब राजकुमार की पुत्री लैला। दिव्य प्रेम की यह प्रतीक कथा अनेक फारसी प्रेम गीतों की विषय वस्तु बनी है, विशेष रूप से 1188-82 ई. में लिखित निज़ामी के काव्य में।
10. अरबी लोकोक्ति।
11. कुरान तथा ओल्ड टेस्टामेण्ट में जोसेफ की कहानी का संदर्भ।
12. फरीदुद्-दीन अत्तार (1150-1230), फारसी सूफी महाकवि।

13. फारसी गूढ़ कविता।

14. कुरान 50: 21

15. जलालुद्-दीन रूमी (1270-73 ई.), मथवनी। जलालुद्-दीन जिसे मौलाना (हमारा स्वामी) कहा जाता था, सभी फारसी सूफी कवियों में महानतम और मौलवी ”संवेग घूमती“ दरवेश व्यवस्था का संस्थापक है।

16. बहाउल्लाह के एक लघु गीत से।

17. कुरान 87: 3

18. कुरान 41: 53

19. कुरान 57: 3

20. अली से सम्बन्धित कथन।

21. शेख अदू इस्माइल अब्दुल्ल अंसारी, हिरात के, (1006-1088), सूफी नेता, पैगम्बर के साथी अंबू अय्यूब की वंश-परम्परा से। प्रमुख रूप से अपने ‘मुनाजात’ (प्रार्थनाओं) और रुवाइय्यांत (चौपदों) के लिए संसार। ”अंसार“ का अर्थ है ”सहयोगी“ या मदीना में मुहम्मद के साथी।

22. कुरान 1: 5

23. यह ”प्रकाशपुंजी“ या सूफी नेताओं द्वारा मार्गदर्शित सत्य के लिए रहस्यमय भटकाव तथा अनुसंधान को सूचित करता है। यहाँ बहाउल्लाह रहस्यवादियों को चेताते हैं कि उनके दिवस में दिवस प्रकटीकरण आगे की खोज को अनावश्यक बनाता है, जैसा कि अली ने कहा था - ”सूर्य निकल आने पर दीपक को बुझा दो“ - सूर्य नव दिवस में ईश्वरावतार का सूचक है।

24. कुरान 2: 151

25. कुरान 4: 80

26. कुरान 18: 37

27. स्वयं बहाउल्लाह के प्राकट्य का संदर्भ।

28. कुरान 16 13

29. हदीथ, अर्थात पारम्परिक रूप से पैगम्बर मुहम्मद या किसी एक पवित्र इमाम से सम्बन्धित कार्य या कथन।

30. कुरान 83: 28

31. पैगम्बर मुहम्मद।

32. हाफिज: शमसुद्-दीन मुहम्मद, शीराज के, मृत्यु 1389 ई. एक फारसी महाकवि।

33. कुरान 57: 3

34. यह आन्तरिक तल के सूफी विचार को सूचित करता है, जो 'प्रकटित सत्य' से तुलना करने पर अवास्तविकता ही है।

35. स्वयं बहाउल्लाह के संदर्भ में, जिन्होंने अभी अपने मिशन की घोषणा नहीं की थी।

36. कुरान 4: 129

37. अरबी कविता

38. कुरान से 50: 21

39. मुहम्मद के उत्तराधिकारी अली की सूचक एक उपाधि।

40. अली

41. शाब्दिक रूप से "जैहुन" तुर्किस्तान की एक नदी।

42. कुरान 9: 51

43. कुरान 76: 5

44. मुहम्मद

45. कुरान 55: 26, 27

46. कुरान 15: 21

47. विश्वेश्वरवाद, "केवल परमात्मा का है, वह सब वस्तुओं में और सब वस्तुएँ उसमें है" - इस सूत्र से निकला एक सूफी सिद्धांत।

48. यू सूफी जीवन की तीन अवस्थाओं को सूचित करता है - 1. शरीअत, या धार्मिक नियम, 2. तरीकत, या वह मार्ग जिस पर रहस्यमय पथिक उस सत्य की खोज में यात्रा करता है, इस अवस्था में विरवितवाद भी शामिल है, 3. हकीकत, या वह अन्य जो सूफियों के अनुसार तीनों अवस्थाओं से होकर यात्रा का लक्ष्य है यहाँ बहाउल्लाह शिक्षा देते हैं कि सत्य की खोज में अपने को सारे नियमों से ऊपर मानने वाले कुछ सुफियों के मत के विरुद्ध, नियमों या धर्म का पालन अत्यावश्यक है।

49. मकाम-ए-महमूद, कुरान 17: 81

50. कुरान 2: 84

51. ”शांति“। यह शब्द किसी निबन्ध के उपसंहार में प्रयोग होता है।

52. इस फारसी शब्द के पाँच वर्ण हैं - ग, न, ज, श, क अर्थात गाफ, नून, जीम, शीन, काफ।

53. यह और पहले आए उद्धरण इस्लाम की शिक्षाओं से लिए गए हैं।

54. यह परम्परागत फारसी शैली में स्वयं बहाउल्लाह का संदर्भ है।

* * *